ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 2, February 2016

दिनकर की प्रेम प्रतिमा ‘ उर्वशी ‘

डॉ सरोज

एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, का.सु.साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अयोध्या

सारांश

‘मर्त्य मानव की विजय का तूर्य हूँ मैं
उर्वशी! अपने समय का सूर्य हूँ मैं
सूर्य का एक नाम दिनकर भी है। उर्वशी को सम्बोधित करके दिनकरजी संभवत: समय को पहचानने और अपने ही बारे में कुछ कहना चाहते हैं। अपने सम्पूर्ण साहित्य में दिनकरजी ने कहीं भी स्वयं को सूर्य नहीं कहा है। कहा है तो पुरुरवा के माध्यम से ही और वह भी उर्वशी को सामने रखकर। इसके लिए उन्होंने उर्वशी का चयन क्यों किया? यह प्रश्न भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

नारी पात्रों के उच्छृंखल चरित्र को अमानवी पात्रों में देखा जा सकता है। मानव जीवन को भोगने की आकांक्षा मन में लिए अप्सराएँ संसार के किसी भी बंधन को नहीं मानती। वे अपूर्व सुंदरी, मनमोहनी मुक्त प्रेम की जीवित प्रतिमाएँ हैं। इनका मन संयम से परे तथा एक सीमा तक उच्छृंखल है। वे संसार के दुख और पीड़ाओं को न समझती हैं और न समझना चाहती हैं। इनका कार्य तो मात्र पुरुषों के हृदय में लालसा एवं कामनाओं को जन्म देकर रहस्यमयी सागर में भटका देना है। किसी के लिए समर्पित हो जाना इनके स्वभाव में नहीं।

जहाँ प्रेम राक्षसी भूख से क्षण क्षण अकुलाता है
प्रथम ग्रास में ही जीवन की ज्योति निगल जाता है।
धर देता है भून रूप को दाहिक आलिंगन से
छवि को प्रभाहीन कर देता ताप तप्त चुम्बन से
पतझर का उपमान बना देता वाटिका हरी को
और चूमता रहता फिर सुन्दरता की ठठरी को। (उर्वशी)

परिचय

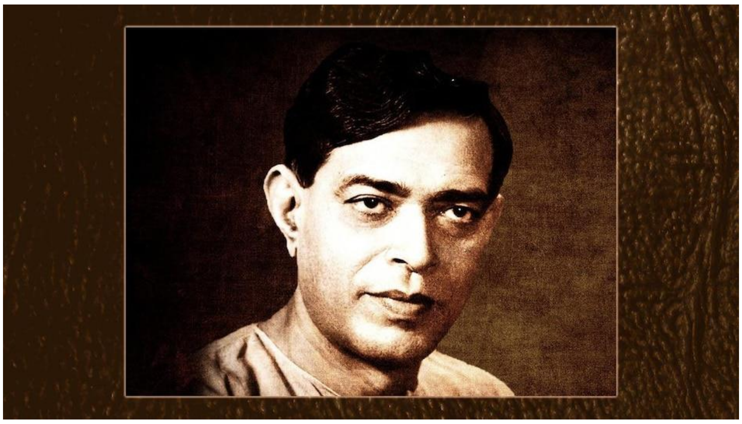

रामधारी सिंह 'दिनकर'

दिनकर जी ने अप्सराओं के इस मिथक को भी तोड़ने का प्रयास किया है कि वे अप्सरा होने के कारण संसार के नियमों की अनदेखी कर रहीं हैं। उर्वशी की रचना के पीछे दिनकर जी का मन्तव्य कुछ अलग रहा है। उन्होंने उर्वशी को प्रेम की पराकाष्ठा पर पहुँचाया है।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 2, February 2016

उर्वशी में प्रेम की तीव्रता है। वह समाज के सभी बंधनों का विरोध अप्सरा होने के कारण नहीं करती, बल्कि वह प्रेम के नए स्वरूप की पराकाष्ठा में जीने के लिए आतुर है। अप्सरा होने के बाद भी उसके मन में प्रेम का एक सांसारिक दृष्टिकोण देखा जा सकता है। पुरुरवा के मुँह से अनासक्ति की बातें सुनकर उसे बहुत गहरा आघात लगता है। वह पुरुरवा के हृदय में आसक्ति उत्पन्न करने के लिए अपने हृदय को खोलकर रख देती है।[1,2]

आ मेरे प्यारे तृषित! श्रान्त! अन्त: सर में मज्जित करके,
हर लूँगी मन की तपित चँदनी, फूलों से सज्जित करके
रसमयी मेघमाला बनकर मैं तुझे घेर छा जाऊँगी
फूलों की छाँह तले अपने अधरों की सुधा पिलाऊँगी। (उर्वशी)

प्रेम को प्रतिष्ठा प्रदान करते हुए वह स्थापित करना चाहती है कि प्रेम से मात्र नारी का ही नहीं पुरुष का भी उत्थान होता है।

किसने कहा तुम्हें, जो नारी नर को जान चुकी है
उसके लिए अलभ्य ज्ञान हो गया परम सत्ता का
और पुरुष जो आलिंगन में बाँध चुका रमणी को
देशकाल को भेद गगन में उठने योग्य नहीं है। (उर्वशी)

दिनकरजी मानते हैं कि प्रेम का स्वरूप सदैव उदात्त होता है। उसे वासना आसक्ति और रति की क्षुद्र सीमाओं में नहीं बाँधा जा सकता। प्रेम एक व्यापक और विशाल मनोवृत्ति है। इसे मनोरंजन की संकीर्ण धारा के रुप में नहीं देखा जाना चाहिए। प्रेम में मानवता के सत्य का शाश्वत स्पन्दन होता है प्रेम क्षणिक हो ही नहीं सकता। वह स्थिर निस्सीम और चिरंतन होता है। प्रेम में मात्र पाने का ही सत्य नहीं होता, वरन उसमें त्याग तथा दूसरों को प्रसन्नता प्रदान करने का भाव भी रहता है। इसी कारण से उसे शाश्वत कहा गया है और यही कारण है कि प्रेम की सीमा मृत्यु की सीमा से भी परे होती है।

उर्वशी की भूमिका में दिनकर जी लिखते हैं - पुरुरवा और उर्वशी का प्रेम मात्र शरीर के धरातल पर नहीं रुकता, वह शरीर से जन्म लेकर मन और प्राण के गहन, गुह्य लोकों में प्रवेश करता है। रस के भौतिक आधार से उठकर रहस्य और आत्मा के अन्तरिक्ष में विचरण करता है। दिनकरजी की प्रेम सम्बधी अवधारणा में गहरी दार्शनिकता है। प्रेम के द्वारा प्रेमी को वह स्थान प्राप्त हो सकता है जो योगियों को साधना के उपरांत मिलता है। वे मानते हैं -

जगत प्रेम प्रथम लोचन में,
तब तरंग नियमन में।

स्त्री के मातृत्व एवं भार्या स्वरूप पर दिनकरजी ने उर्वशी में औशीनरी के माध्यम से कहने का प्रयास किया है कि गृहणी के अतंर में तृषा और ज्वाला नहीं होती। वह समर्पण की प्रतिमूर्ति होती है। उर्वशी द्वारा पुरुरवा को अपना लिए जाने से दुखी होकर औशीनरी अपने पति की अनुचरी तथा सहधर्मिणी बनकर ही रह जाती है। औशीनरी इसका प्रतिकार करती है। वह पुरुरवा से ही नहीं वरन स्त्रियों से भी शिकायत रखती है-

ये प्रवंचिकाएँ, जाने क्यों तरस नहीं खाती हैं
निज विनोद के हित कुल वामाओं को तड़पाती हैं।

औशीनरी अप्सरा उर्वशी से पूछती है कि आखिर मैंने तुम्हारा कौन सा अहित किया है जो तुमने सर्वस्व छीन लिया और मुझे जीवन भर एक विरहणी की भाँति जीने को विवश कर दिया। फिर वह उर्वशी को दोषमुक्त करते हुए अपने ही मन को समझाती है कि नारी भी आखिर क्या करे। पुरुष है ही इतना कमजोर कि नारी के सौंदर्य के आगे उसकी एक नहीं चलती। उसकी सारी वीरता एक क्षण में ही समाप्त हो जाती है। नारी के सौंदर्य के वशीभूत होकर पुरुष अपने सिंह रुप को छोड़कर मेमने की भाँति नारी के चरणों में लोटने लगता है।

पर न जाने बात क्या है?
इन्द्र का आयुध पुरुष जो झेल सकता है, सिंह से बाँहें मिलाकर खेल सकता है
फूल के आगे वही असहाय हो जाता, शक्ति के रहते हुए निरुपाय हो जाता
विद्ध हो जाता सहज बंकिम नयन के बाण से, जीत लेती रूपसी नारी उसे मुस्कान से
मैं तुम्हारे बाण का बींधा हुआ खग, वक्ष पर धर सीस मरना चाहता हूँ
मैं तुम्हारे हाथ का लीला कमल हूँ, प्राण के सर में उतरना चाहता हूँ

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 2, February 2016

दिनकर की सम्पूर्ण काव्य साधना में उर्वशी को मील का पत्थर माना जाता है। यह आधुनिक युग को एक नई दृष्टि प्रदान करने वाला प्रबंध काव्य है। उर्वशी को प्रत्येक भाषा के कवियों ने अपने काव्य की नायिका बनाया है। उर्वशी को सम्पूर्ण प्रतिष्ठा दिलाना एक दुष्कर कार्य था जिसे दिनकरजी ने कर दिखाया। लेकिन उनका काव्य चर्चित होने के साथ विवादास्पद भी बना रहा।

उर्वशी का आरम्भ अप्सराओं की उस चिन्ता से होता है कि उर्वशी को पृथ्वीवासी राजा पुरुरवा से प्रेम हो गया है। मेनका, रम्भा और सहजन्या का मानना है कि सुरलोक अमर है यहाँ के निवासियों को व्यंजनों की गंध लेकर ही तृप्त होना पड़ता है। परन्तु मृत लोक नश्वर है। वहाँ के निवासी अपने क्षणिक जीवनकाल में ही सम्पूर्ण आनन्द का भोग कर लेते हैं। मेनका को उर्वशी का राजा पुरुरवा की ओर आकृष्ट होना तनिक भी नहीं भाता। वह कहती है कि अप्सराओं का जन्म किसी एक के लिए नहीं होता। पृथ्वावासियों से प्रेम करने पर नारी को माता बनना पड़ता है जिससे उसका सारा सौंदर्य नष्ट हो जाता है। यदि उर्वशी भी पृथ्वी पर जाने का प्रयत्न करेगी तो उसके साथ भी यही होगा। -
गर्भभार उर्वशी मानवी के समान ढोयेगी?
यह शोभा, यह गठन देह की, यह प्रकांति खोयेगी?
जो अयोनिजा स्वयं, वही योनिज संतान जनेगी?
यह सुरम्य सौरभ की कोमल प्रतिमा जननि बनेगी?
किरणमयी यह परी करेगी यह विरूपता धारण?
वह भी और नहीं कुछ केवल एक प्रेम के कारण? (उर्वशी)

राजा पुरुरवा की पत्नी औशीनरी उर्वशी के इस प्रेम प्रसंग को जानकर दुखी होती है, किन्तु उनकी सखी मदनिका उन्हें दिलासा देती है। पुरुषों का हृदय बडा विचित्र होता है, उसके हृदय में जब नारी के लिए प्रेम भाव जागृत होता है तब वह चाहे अजेय केसरी ही क्यों न हो, बेसुध होकर सुन्दरी के चरणों में गिर जाता है। पुरुष उस नारी के वश में रहता है जो उसे अतृप्ति के रस में निमज्जित किए रहती है। पुरुरवा ऐसे प्रेमी का प्रतीक है जो माँगना और छीनना दोनों प्रवृत्तियों के विरोध में है। उर्वशी भी अपने प्रेमी के इस संकल्प से भयभीत हो जाती है। -
तन से मुझको कसे हुए अपने दृढ आलिंगन में,
मन से किन्तु, विषण्ण दूर तुम कहाँ चले जाते हो?
उर्वशी की चिन्ता यह है कि स्वर्ग की जिस शीतलता को छोड़कर वह पुरुष के उत्तप्त रुधिर के प्रति समर्पण करने आई थी वही देवलालसा में डूब गया तो उसका पृथ्वी में आने का क्या लाभ? वह पुरुरवा के द्वंद्व को सुलझाने का प्रयास भी करती है। उसके राग और वैराग्य को पाटने का प्रयास करती है।

पृथ्वी पर दोनों का मिलन होता है और निष्काम काम की स्थापना होती है किन्तु भरतमुनि के श्राप के कारण उनका बिछोह होता है। डॉ. भारत भूषण अग्रवाल कहते हैं कि उर्वशी काम प्रेरणा के सही और साहसपूर्ण अनुगमन एवं प्रतिपालन द्वारा व्यक्ति के पूर्णत्व अभियान का जयघोष है।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 2, February 2016

दिनकरजी ने उर्वशी के माध्यम से प्रेम के सत्य पर दार्शनिक पक्ष रखते हुए चिन्तन किया है। वे अप्सरा उर्वशी को अपना प्रधान पात्र इसलिए भी बनाते हैं कि जीवन, संसार और प्रेम की सहज भूमि पर विचार मंथन किया जा सके। सांसारिकता से परे प्रेम का एक संसार जिसे देखने और संजोने का हर कोई यत्न करता है, हमारे आसपास हो। एक ऐसा विशाल हृदय जिसमें दया माया ममता मधुरिमा और विश्वास भरा हो। प्रसाद जी की 'श्रद्धा' से बहुत अलग होकर भी उर्वशी प्रेम को नए रूप में परिभाषित करने में सफल होती है। कमोवेश दिनकरजी का उद्देश्य भी यही है।

विचार – विमर्श

रामधारी सिंह दिनकर जी ने **उर्वशी** महाकाव्य में, उर्वशी और पुरूरवा की प्रेम-कथा के सुविख्यात पौराणिक आख्यान को अपने काव्य का विषय बनाया है किन्तु **कुरूक्षेत्र** के युधिष्ठर और भीष्म की तरह ही इस काव्य की उर्वशी और पुरूरवा भी पौराणिक नाम की कलगी मात्र धारण किये हुये हैं. यहाँ तो बीसवीं सदी के पुरूरवा और उर्वशी हैं. पौराणिक आख्यान ने दिनकर की **उर्वशी** के काव्य-रस को सुरक्षित रखने के लिये अंगूर के पतले छिलके का काम किया है. दिनकर जी ने स्वयं लिखा है- **इस कथा को लेने में वैदिक आख्यान की पुनरावृत्ति अथवा वैदिक प्रसंग का प्रत्यावर्त्तन मेरा ध्येय नहीं रहा है. मेरी दृष्टि में पुरूरवा सनातन नर का प्रतीक है और उर्वशी सनातन नारी का.**

दिनकर की उर्वशी कौन है, कैसी है इसे हम दिनकर के शब्दों में ही कह सकते हैं-**कविताओं में हम जिस नारी का बखान सुनते हैं वह किसी की भी बेटी, बहन या भार्या नहीं होती. वह तो अनामिका, अशरीरी कल्पना की प्रतिमा है. जिसके अंग पर उम्रों के दाग नहीं लगते, जो स्पर्श से परे खड़ी हमारे सपनों पर राज करती है. चूँकि वह कोई नारी नहीं है इसीलिये वह सभी नारियों का प्रतिनिधित्व करती है.**

दिनकर की उर्वशी निष्ठावान प्रेमिका है. एकाचारिणी है, अप्सरा होकर भी बसन्तसेना की भाँति असामान्या है, किसी एक के प्रति अर्पित है. दिनकर की उर्वशी में जगत और जीवन का स्पंदन अधिक है साथ ही अप्सराओं की स्वर्गीयता भी. वह विश्वप्रिया की प्रतीक होने के साथ ही एक व्यक्ति की प्रिया भी है, जो गर्भ धारण कर माँ बनती है. इस तरह वह सविशेष और निर्विशेष दोनों है. दिनकर की उर्वशी अध्यात्मबोध और जगद्बोध दोनों ही दृष्टियों से पूर्ण है. अतः उर्वशी के समक्ष पुरूष पुरूष रहता है, कामाध्यात्म को समझने वाला प्रेमी रहता है.

श्रृंगारिक वर्णनों के रहने पर भी **उर्वशी** अपने उदात्त विचारों के कारण सर्वोत्तम काव्य है. दिनकर जी ने अपनी प्रौढ़ अवस्था में श्रृंगार और प्रेम को अपने काव्य का विषय बनाया इसीलिये **उर्वशी** में किशोरवय की सहज बिछलन और ऐन्द्रियता का अतिरेक देखने को नहीं मिलता वरन् सांस्कृतिक स्तर बहुत उच्च कोटि का देखने को मिलता है. **उर्वशी** मे प्रेम को एक बोधात्मक विषय के रूप में स्वीकार किया गया है और उसे भारतीय ढ़ंग के उन्नयन के सहारे **वासना** से **दर्शन** तक पहुँचाया है-

पहले प्रेम सेपर्श होता है,
तदन्तर चिन्तन भी.
प्रणय प्रथम मिट्टी कठोर है,
तब वायव्य गगन भी।

इसालिये दिनकर की **उर्वशी** एक ओर अपार्थिव सौन्दर्य का पार्थिव संस्करण है तो दूसरी ओर पार्थिव सौन्दर्य का अपार्थिव उन्नयन भी- उन्नयन और सूक्ष्मीकरण भी.

दिनकर ने लिखा है- **प्रेम का आरम्भ भौतिकता में और परिपाक अध्यात्म में है. प्रेम पहले फिजिक्स और तब मैटाफिजिक्स होता है.** यह सूफियों की **इश्क मजाजी** और **इश्क हकीकी** के सन्दर्भ मे शारीरिक सोपान से

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 2, February 2016

आध्यात्मिक सोपान का आरोहण है. किन्तु, दिनकर के प्रेम दर्शन की विशेषता यह है कि इसमें **तन** का महत्व अन्त तक बना रहता है. **नये सुभाषित** में दिनकर जी ने लिखा है-

प्रेम की मादकता का भेद
छिपा रहता भीतर मन में
काम तब भी अपना मधुभेद
सदा अंकित करता तन में।

कारण, **शरीर प्रेम की जन्मभूमि है और जैसे सब लोग जन्मभूमि से प्यार करते हं वैसे ही प्रेम को भी अपनी जन्मभूमि अन्य सभी भूमियों से अधिक पसन्द है**.

इस तरह प्रेम के प्रति कवि का दृष्टिकोण केवल निरामिष नहीं है, प्रारम्भ में उसने मांसल भाव को स्वीकार किया है. वास्तव में प्रेम के क्षेत्र में प्रारम्भ में ही **विदेह भाव** धारण कर लेने से आगे चलकर उसके लड़खड़ा जाने का भय बना रहता है; कारण, अपरिचित वस्तु में एक दुर्निवार आकर्षण रहता है. अतः देह-सीमा से स्वानुभूतिमय परिचय कर लेने के बाद विदेह भाव धारण करना अधिक निरापद
और न्याय संगत होता है. सारांश यह है कि राग से परिचय पाने के बाद विराग धारण करना चाहिये- यही व्यक्ति का स्वाभाविक विकास है.[3]

प्रेम की संवेदना का सम्बन्ध समूचे शरीर से है. यह प्रेम हम प्राणियों की एक जैव मानसिक ऊर्जा है, जो उचित आलम्बन के अभाव में प्रायः आत्मरति या सजातीय रति में परिवर्तित हो जाती है और जो किसी भी आध्यात्मिक प्रयास या कठोर बौद्धिक से एक बार उन्मूलित नहीं हो सकती है. यह शारीरिक प्रेम-भावना हमारे रक्त में तिलतैलवत् समायी हुई है. प्रेम सम्बन्धी इस अपरिहार्य जैव वास्तविकता को उर्वशी की इस उक्ति में अभिव्यक्त किया गया है-

रक्त बुद्धि से अधिक बली है और ज्ञानी भी,
क्योंकि बुद्धि सोचती और शोणित अनुभव करता है।

प्रेम के मादक, तरंगित और उत्ताप संवेगों का मनुष्य के नाड़ी संस्थान, चेतना ग्रन्थियों, इन्द्रियों और रक्त चालन पर कैसा प्रभाव पड़ता है-इसके प्रति दिनकर जी बहुत सचेत दीख पड़ते हैं-

यह कैसी माधुरी? कौन लय स्वर में गूँज रहा है
त्वचा जाल पर, रक्त शिराओं में, अकूल अन्तर में?

दिनकर की **उर्वशी** में ऐसे अनेक स्थल हैं जहाँ अर्पण की शारीरिक ऊष्मा से भरपूर भावों की अभिव्यक्ति इतनी शिल्पित है कि उस भोंडेपन का या शिथिलता का भान भी नहीं होता जो सूक्ष्मता के आकांक्षी छायावादी कवियों में कभी-कभी देखने को मिल जाता है. उदाहरण-

उफ री यह माधुरी! और ये अधर विकच फूलों से।
ये नवीन पाटल के दल आनन पर जब गिरते हैं,
रोम कूप, जाने, भर जाते किन पीयूष कणों से।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 2, February 2016

सामान्यतः पाश्चात्य विचारकों ने प्रेम के तीन स्वरूप माने हैं-

1.प्लेटोनिक लव-

प्लेटोनिक लव पूर्णतः निरामिष और दार्शनिक होता है. यह प्रेम प्रजननशील नहीं होता है और सजातीय या समयौन हो सकता है. प्लेटो का तो कहना था कि ऐसे प्रेम में प्रजनन कार्य नहीं, सांस्कृतिक कार्य हुआ करते हैं तथा इससे ज्ञान, सत्य और अध्यात्म की सिद्धि होती है.

2. रोमाण्टिक प्रेम-

रोमाण्टिक प्रेम की कुछ तात्विक विशेषतायें हैं-
क. इसमें प्रेम का आलम्बन दुर्लभ रहता है, सुलभ या अलभ्य नहीं.
ख. रोमाण्टिक प्रेम का आश्रय अपने आलम्बन के अमित मूल्यवान होने में अडिग विश्वास रखता है, जिससे आलम्बन की प्राप्ति के लिये अनेक मधुर प्रयास होते रहते हैं.
ग. रोमाण्टिक प्रेम में रूढ़ियों, परम्पराओं और बन्धनों के प्रति विद्रोह रहता है. वह बन्धनहीन होता है और रूढ़ियों और बन्धनों से टकराकर अधिकाधिक शक्ति तथा गति अर्जित करता है.जैसे- ऊबड़-खाबड़ चट्टानों के बीच में आ जाने से
नदी और वेग से बहने लगती है वैसे ही जब प्रिय-मिलन के सुख में बाधायें आती हैं तब प्रेम का वेग भी सौ गुना बढ़ जाता है.
घ. रोमाण्टिक प्रेम के अस्तित्व के लिये अधिक रूढ़ियों, बन्धनों और बाधाओं का रहना आवश्यक है.
ङ. रोमाण्टिक प्रेम में- आवेग, कल्पना और कोमलता- तीन तत्वों की स्थिति अनिवार्य है.
आवेग की अभिव्यक्ति -
उर्वशी का कथन-

यदि आज कान्त का अंक नहीं पाऊँगी
तो शरीर छोड़ पवन में निश्चय मिल जाऊँगी।

कल्पना और कोमलता की अभिव्यक्ति-
पुरूरवा का कथन-

एक पूर्ति में सिमट गई किस भाँति सिद्धियाँ सारी?
कब था ज्ञात मुझे, इतनी सुन्दर होती हैं नारी?
लाल-लाल वे चरण कमल से, कुंकुम से, जावक से,
तन की रक्तिम कांति शुद्ध, ज्यों धुली हुई पावक से.

पग पड़ते ही फूट पड़े विहम प्रवाल धूलों से
जहाँ खड़ी हो, वहीं व्योम भर जाये श्वेत फूलों से।

च. प्रेम में आलम्बन को एक महान शोभावलय में ढँककर देखा जाता है तथा इसमें प्रेम के आलम्बन को भी इतना महिमामय रहना चाहिये कि वह आश्रय के समक्ष अपनी अद्धोन्मीलित रहस्यमयता का आद्यान्त निर्वाह कर सके. इसी आलम्बनगत रहस्यमयता के कारण उर्वशी के विषय में पुरूरवा की ऐसी धारणा है-

नहीं, उर्वशी नारी नहीं, आभा है निखिल भुवन की,
रूप नहीं, निष्कलुष कल्पना है सृष्टा के मन की।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 2, February 2016

जब रोमाण्टिक प्रेम में आलम्बन की दुर्लभता अधिक रहती है तब उसे जीवित रखने के लिये अतृप्त प्रेमी **प्लेटोनिक** दृष्टिकोण बना लेता है और वह मानने लगता है कि अव्यक्त प्रेम ही पवित्र होता है.

3. लव थ्रू पैरेण्टली च्वाइस-
संवेगात्मक मनोविज्ञान की दृष्टि से यह निकृष्ट होता है, कारण यह किसी पूर्वराग के बिना मात्र कर्तव्य रूप में दो व्यक्तियों के कन्धों पर विन्यस्त हो जाता है.

उर्वशी के प्रारम्भ का प्रेम-निरूपण **रोमाण्टिक** है और अन्तिम अंश का **प्लेटोनिक**.
उर्वशी में दिनकर जी ने नर-नारी प्रेम की जिस अशरीर आनन्द-लहर को प्रस्तुत किया है, उसमें कालिदास, फ्रायड और लॉरेन्स की प्रेम दृष्टियों को कुछ देर तक स्वीकार किया है. इसमें दिनकर जी ने अपनी मनीषा से भी काम लिया है और इस पर बार-बार बल दिया है कि प्रेम का जन्म काम में होता है किन्तु उसकी परिणति काम के अतिक्रमण में होनी चाहिये. कवि कहते हैं- **रूप की आराधना का मार्ग आलिंगन नहीं है**. और यही प्रेम सेक्स से भिन्न तथा ऊँचा सिद्ध होता है. सेक्स शरीर की तृष्णा है, प्रेम आत्मा की भूख है. अतः यह आवश्यक नहीं है कि सेक्स का आलम्बन ही प्रेम का आलम्बन हो अथवा प्रेम के आलम्बन तक ही सेक्स की भावना सीमित हो. यदि प्रेम र सेक्स का आलम्बन एक हो सके तो वह आदर्श स्थिति है, किन्तु इन दोनों में आलम्बनगत भेद होने पर विशेष आश्चर्य नहीं होना चाहिये, क्योंकि प्रेम इतना पवित्र और महान है कि उस पर दैहिक स्खलनों के दाग नहीं पड़ते. दिनकर जी यह स्पष्ट रूप से मानते हैं कि सेक्स की अनुभूति में शारीरिक अनुभूति होती है किन्तु प्रेम की अनुभूति में शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक तीनों अनुभूतियाँ समन्वित रहती हैं. विशेषकर आध्यात्मिक अनुभूतियाँ प्रेम में तभी संश्लिष्ट होती हैं जब प्रेम में शारीरिक अनुभूति का समावेश होने लगता है-

नहीं इतर इच्छाओं तक अनासक्ति सीमित है
उसका किंचित स्पर्श प्रणय को भी पवित्र करता है।

किन्तु प्रेम की इस आध्यात्मिक अनुभूति को सामान्य नर नहीं पा सकता. इसे पाने के लिये रूप के अतिक्रमण से उत्थित होने वाली एक विशिष्टता चाहिये, जिससे समन्वित नर को दिनकर जी ने **कवि** कहा है-

नर समेट रखता बाहों में स्थूल देह नारी की,
शोभा की आभा तरंग से कवि क्रीड़ा करता है।

इस प्रकार दिनकर ने यहाँ उस उज्जवल प्रेम का निरूपण किया है, जिसके सहारे मनुष्य रूप और इन्द्रियों से परे रहने वाले सौन्दर्य के दर्शन करता है तथा निरामिष सौन्दर्य चेतना को प्राप्त करता है. दिनकर जी के प्रेम-दर्शन की व्यवहारिकता इसमें है कि इन्होंने लौकिकता, ससीमता और शारीरिकता को ही उज्जवल प्रेम का आधार माना है-

देह प्रेम की जन्मभूमि है पर उसके विचरण की
सारी लीला-भूमि नहीं सीमित है रूधिर-त्वचा तक.

इस तरह देह से उत्पन्न होने वाले प्रेम को दिनकर जी ने रहस्य-चिन्तन तक पहुँचा दिया है. जैसे जल पंक से कमल उत्पन्न होता है वैसे ही शरीर से अशरीरी प्रेम उत्पन्न होता है. आगे कवि ने तन-अतिक्रमण को कई बार प्रयुक्त कर प्रेम को मनोमय लोक तक पहुँचा दिया है और नर-नारी के बीच रहने वाले यौन भेद को तिरोहित कर दिया है-

वह निरभ्र, जहाँ की निर्विकल्प सुषमा में,
न तो पुरूष मैं पुरूष, न तुम नारी केवल नारी हो।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 2, February 2016

दोनों ही प्रतिमान किसी एक ही मूल सत्ता के
देह-बुद्धि से परे, नहीं जो नर अथवा नारी है।

इन्हीं पंक्तियों को पढ़कर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की यह सम्मति यथातथ्य जान पडती है कि, **उर्वशी विश्व ब्रह्माण्डमयी मानस की नित्य-नवीन सौन्दर्य कल्पना के रूप में ऐसी निखरी है कि आश्चर्य होता है.------- उर्वशी विराट मानस की कालजयी कल्पना है--------- यह समाधिस्थ चित्त की रचना है------------ समाधिस्थ चित्त जो विराट मानस से एकाकार हो गया था.**

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि कवि प्रेम-दर्शन के निरूपण में विचार, संवेग तथा वृत्तियों के उर्ध्वगमन या उर्ध्वसंचरण का विश्वासी बन गया है तथा उसने फ्रायड के उन्नयन और अरविन्द दर्शन के उर्ध्वसंचरण का मौलिक समीकरण प्रस्तुत किया है. कुछ स्थलों पर उसने उज्जवल रस की विवृत्ति करने वाले रागानुरागा भक्ति के कवियों की तरह यहाँ तक कह दिया है-

चूमते हम अचेत हो जब असंज्ञ अधरों को
वह चुम्बन अदृश्य के चरणों पर तब चढ़ जाता है.

कवि की दृष्टि में एक स्तर पर इन्द्रिय-तर्पण भी महासुख का साधन बन गया है और कवि के महर्षि च्यवन ने भी अपनी तपःसाधना से यही निष्कर्ष निकाला है. चित्रलेखा कहती हैं-.
नारी को पर्याय बताकर तपःसिद्धि भूमा का
सचमुच, त्रिया-जाति को ऋषि ने अद्भुत मान दिया है।

यह ज्ञातव्य है कि साधन और माध्यम की दृष्टि से पुरूरवा और च्यवन एक-दूसरे के विलोम हैं. कारण, पुरूरवा भोग से योग तक पहुँचे हैं और च्यवन योग से भोग तक. पुरूरवा उर्वशी के माध्यम से उज्जवल रस और सहस्रार के प्रस्फुटन तक पहुँचे हैं, जबकि च्यवन ने तपोयोग के द्वारा हरि की प्रसन्नता के स्वरूप भूमा की पर्याय सुकन्या को प्राप्त किया है. इस तरह भोग और योग एक ही गन्तव्य पर पहुँचने वाले दो मार्ग हैं. अतः पुरूरवा का अन्तिम विकल्प कामाध्यात्म की ओर है-

अथवा अपने महाप्रेम के बलशाली पंखों पर
चढ़ असीम उड्डयन भरेगा मन के महागगन में,
जहाँ त्रिया कामिनी नहीं है, छाया है परम विभा की
जहाँ प्रेम कामना नहीं, प्रार्थना, निदिध्यासन है.

वास्तव में कवि ने नारी की सुषमा को **तपस्या का प्रसाद** बना दिया है. श्रृंगारिक वर्णनों के रहने पर भी **उर्वशी** अपने उदात्त विचारों के कारण एक सर्वोत्तम महाकाव्य है.

परिणाम

यह रामधारी सिंह 'दिनकर' द्वारा रचित एक काव्य नाटक है। यह 1961 ई० में प्रकाशित हुआ था। इस काव्य में दिनकर ने उर्वशी और पुरुरवा के प्राचीन आख्यान को एक नये अर्थ से जोड़ना चाहा है। इसके लिए 1972 ई० में उन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला था।इस कृति में पुरुरवा और उर्वशी दोनों अलग-अलग तरह की प्यास लेकर आये हैं। पुरुरवा धरती पुत्र है और उर्वशी देवलोक से उतरी हुई नारी है। पुरुरवा के भीतर देवत्व की तृष्णा है। उर्वशी सहज निश्चित भाव से पृथ्वी का सुख भोगना चाहती है।उर्वशी प्रेम और सौन्दर्य का काव्य है। प्रेम और सौन्दर्य की मूल धारा में जीवन दर्शन सम्बन्धी अन्य छोटी-छोटी धाराएँ आकर मिल जाती हैं। प्रेम और सुन्दरता का विधान कवि ने बहुत व्यापक धरातल पर किया है। कवि ने प्रेम की छवियों को मनोवैज्ञानिक धरातल पर पहचाना है।दिनकर की भाषा में हमेशा एक प्रत्यक्षता और सादगी दिखी है, परन्तु उर्वशी में भाषा की सादगी अलंकृति और अभिजात्य की

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 2, February 2016

चमक पहन कर आयी है- शायद यह इस कृति को वस्तु की माँग रही हो। रामधारी सिंह दिनकर की यह महत्वपूर्ण कृति गीतिनाट्य है।[4]

भूमिका: पुरुरवा और उर्वशी की कथा कई रूपों में मिलती है। उसकी व्याख्या भी कई प्रकार से की गई है। राजा पुरुरवा सोमवंश के आदि पुत्र थे। इनकी राजधानी प्रयाग के पास, प्रतिष्ठानपुर में थी। पुराणों में कहा गया है कि जब मनु और श्रद्धा को संतान की इच्छा हुई तब उन्होंने वशिष्ठ मुनि से यज्ञ करवाया था। श्रद्धा की मनोकामना थी कि वे कन्या की माता बनें। मनु की इच्छा थी कि उन्हें पुत्र की प्राप्ति हो। किन्तु इस यज्ञ से उन्हें कन्या की प्राप्ति हुई। मनु की निराशा से द्रवित होकर वशिष्ठ मुनि ने उसे पुत्र बना दिया। मनु के इस पुत्र का नाम सुद्दुम्न पड़ा। युवा होने के बाद एक बार आखेट करते हुए सुद्दुम्न किसी अभिशप्त वन में चले गए। जहाँ शापवश, वे युवा से युवती बन गए। उनका नाम 'इला' हो गया। इसी इला का प्रेम चन्द्रमा के नवयुवक पुत्र 'बुद्ध' से हो गया। इन्ही से पुरुरवा की उत्पत्ति हुई थी। पुरुरवा को 'एल' भी कहते है। उनसे चलने वाले वंश का नाम चन्द्रवंश है। उर्वशी के उत्पति के विषय में दो अनुमान हैं। पहला यह कि अमृत मंथन के समय समुंद्र से अप्सराओं का जन्म हुआ, उसमे उर्वशी का भी जन्म हुआ था। दूसरा यह कि नारायण ऋषि की तपस्या में विघ्न डालने के कारण जब इंद्र ने उनके पास अनेक अप्सराएँ भेजी, तब ऋषि ने अपने ऊरू को ठोंक कर एक ऐसी नारी को उत्पन्न कर दिया, जो उन सभी अप्सराओं से अधिक रूपवती थी। यही नारी 'उर्वशी' हुई थी। उसका नाम उर्वशी इसलिए पड़ा क्योंकि वह ऊरू से जन्मी थी। भागीरथी की जांघ पर बैठने के कारण गंगा का भी एक नाम उर्वशी है। देवी भगवत के अनुसार, बदरीनाथ धाम में जो देवी-पीठ है, उसे उर्वशी-तीर्थ कहते हैं। नर नारायण की तपस्या-भूमि बदरीनाथ धाम में ही थी। सम्भव है, उर्वशी तीर्थ उसी का स्मारक हो। इस कथा का प्राचीनतम उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है, किन्तु उस सूक्त में इतना ही विदित है कि उर्वशी पुरुरवा को छोड़कर चली जाती है और पुरुरवा उनके विरह में डूब जाते हैं। एक दिन उर्वशी जब पुरुरवा से मिली तब उसने बताया कि वह गर्भवती है। लेकिन उसने लौटकर फिर उनके साथ रहना स्वीकार नहीं किया। बाद में चलकर शतपथ ब्राह्मण और पुराणों में इस कथा का जो पल्लवन हुआ उसमे यह कहा गया है कि उर्वशी के गर्भ से पुरुरवा के छह पुत्र हुए थे। सबसे बड़ा का नाम 'आयु' था। निरुक्त अनुसार, आयु का अर्थ भी मनुष्य होता है। (डॉ फतह सिंह)। इस दृष्टि से 'मनु' और 'इड़ा' तथा 'पुरुरवा' और 'उर्वशी', ये दोनों ही कथाएँ, एक ही विषय को व्यंजित करती हैं। सृष्टि-विकास की जिस प्रक्रिया में कर्तव्य पक्ष का प्रतीक मनु और इड़ा का आख्यान है। उसी प्रक्रिया का भावना-पक्ष पुरुरवा और उर्वशी की कथा में कहा गया है।

सार विलियम विल्सन ने अनुमान लगाया था कि पुरुरवा-उर्वशी की कथा अन्योक्ति परक है। इस कथा का वास्तविक नायक सूर्य और नायिका ऊषा है इन दोनों का मिलन कुछ ही काल के लिए होता है बाद में वे प्रतिदी बिछुड़ जाते हैं। किन्तु इस कथा को लेने में वैदिक आख्यान की पुनरावृति अथवा वैदिक प्रसंग के प्रत्यावर्तन मेरा ध्येय नहीं रहा। मेरी दृष्टि में पुरुरवा सनातन नर का प्रतीक है और उर्वशी सनातन नारी की। उर्वशी शब्द का अर्थ होगा उत्कट अभिलाषा, अपरिमित वासना, इच्छा अथवा कामना और पुरुरवा शब्द का अर्थ है वह व्यक्ति जो नाना प्रकार का रव करे, नाना ध्वनियों से आक्रान्त हो। उर्वशी चक्षु, रसना, घ्राण, त्वक् तथा श्रोत की कामनाओं के प्रतीक है; पुरुरवा रूप, रस, गंध, स्पर्श और शब्द से मिलनेवाले सुखों से उद्वेलित मनुष्य है। पुरुरवा द्वंद्व में है, क्योंकि द्वंद्व में रहना मनुष्य का स्वभाव होता है। मनुष्य सुख की कामना भी करता है और उससे आगे निकलने का प्रयास भी। नारी नर को छूकर तृप्त नहीं होती है और न नर नारी के आलिंगन में संतोष मानता है। कोई शक्ति है जो नारी को नर तथा नर को नारी से अलग रहने नहीं देती। जब वे मिल जाते हैं तब भी, उनके भीतर किसी ऐसी तृषा का संचार करती है, जिसकी तृप्ति शरीर के धरातल पर अनुपलब्ध है। नारी के भीतर एक और नारी है, जो अगोचर और इन्द्रियातीत है। इस नारी का संधान पुरुष तब पाता है, जब शरीर की धारा, उछालते-उछालते उसे मन के समुंद्र में फेंक देती है। जब दैहिक चेतना से परे, वह प्रेम की दुर्गम समाधि में पहुँच कर निस्पंद हो जाता है। पुरुष के भीतर भी एक पुरुष है, जो शरीर के धरातल पर नहीं रहता जिससे मिलने की आकुलता में नारी अंग-संज्ञा के पार पहुँचना चाहती है। परिरम्भ-पाश में बंधे हुए प्रेमी, परस्पर एक दूसरे का अतिक्रमण करके, उसे ऐसे लोक में पहुँचाना चाहते हैं, जो किरणोंज्जवल और वायवीय है। इन्द्रियों के मार्ग में अतीन्द्रिय धरातल का स्पर्श, यही प्रेम की आध्यात्मिक महिमा है। ऋग्वेद में आई वैदिक संस्कृति की पहली कथा उर्वशी और राजा पुरुरवा की कथा है। इसका काल विद्वानों ने 1600 ई.पू. माना है। साहित्य और पुराण में उर्वशी सौंदर्य की प्रतिमूर्ति थी। स्वर्ग की इस अप्सरा की उत्पत्ति नारायण की जंघा से मानी जाती है। पद्मपुराण के अनुसार इनका जन्म कामदेव के उरु से हुआ था। श्रीमद्भागवत के अनुसार यह स्वर्ग की सर्वसुंदरी अप्सरा थी। एक बार इंद्र की राजसभा में नाचते समय वह राजा पुरुरवा के प्रति क्षण भर के लिए आकृष्ट हो गई। इस कारण उनके नृत्य का ताल बिगड़ गया। इस अपराध के कारण राजा इंद्र ने रुष्ट होकर उसे मृत्युलोक में रहने का अभिशाप दे दिया। मृत्युलोक में उसने पुरुरवा को अपना पति चुना। इसके लिए उसने तीन शर्तें रखी कि मैं तुम्हे निर्वस्त्र अवस्था में नहीं देखूँ, दूसरा उर्वशी के इच्छा के प्रतिकूल समागम न करे और उसके दो मेष उससे कभी अलग नहीं हो। शर्त के अनुसार यदि वह पुरु को नग्न अवस्था में देख ले या पुरुरवा उसकी इच्छा के प्रतिकूल समागम करे अथवा उसके दो मेष उससे अलग स्थानांतरित कर दिए जाएं तो वह उनसे संबंध विच्छेद कर स्वर्ग जाने के लिए स्वतंत्र हो जाएगी। पुरुरवा ने उर्वशी के शर्तों को मंजूर कर लिया।

ऊर्वशी और पुरुरवा बहुत समय तक पति पत्नी के रूप में साथ-साथ रहे। इनके नौ पुत्र आयु, अमावसु, श्रुतायु, दृढ़ायु, विश्वायु, शतायु आदि उत्पन्न हुए। अधिक अवधि बीतने पर गंधर्वों को ऊर्वशी की अनुपस्थिति अप्रिय लगने लगी। गंधर्वों ने विश्वावसु को उसके मेष चुराने के लिए भेजा। उस समय पुरुरवा नग्नावस्था में थे। आहट पाकर वे उसी अवस्था में विश्वाबसु को पकड़ने दौड़े। अवसर का लाभ उठाकर गंधर्वों ने उसी समय प्रकाश कर दिया। जिससे उर्वशी ने पुरुरवा को नंगा देख लिया। आरोपित प्रतिबंधों के टूट जाने पर ऊर्वशी श्राप से मुक्त हो गई और पुरुरवा को छोड़कर स्वर्ग लोक चली गई। महाकवि कालीदास के संस्कृत महाकाव्य विक्रमोर्वशीय नाटक की कथा का आधार यही प्रसंग है। आधुनिक हिंदी साहित्य में रामधारी सिंह दिनकर ने इसी कथा को अपने काव्यकृति का आधार बनाया और उसका शीर्षक भी उर्वशी रखा। महाभारत की एक कथा के अनुसार एक बार जब अर्जुन इंद्र के पास अस्त्र विद्या की शिक्षा लेने गए तो उर्वशी उन्हें देखकर मुग्ध हो गई। अर्जुन ने ऊर्वशी को मातृवत भाव से देखा। अतः उसकी इच्छा पूर्ति न करने के कारण। इन्हें शापित होकर एक वर्ष तक पुरुसत्व से वंचित रहना पड़ा।

उर्वशी स्वर्गलोक की अप्सरा थी। एक बार वह तथा उसकी सखी अन्य अप्सरा, चित्रलेखा दोनों भूलोक पर भ्रमण के लिए गयीं। वहाँ एक असुर की उन पर दृष्टि जा पड़ी और उसने उनका अपहरण कर लिया। वह उन्हें एक रथ में लिये चला जा रहा था और वे जोर-जोर से विलाप कर रही थीं कि भूलोक के एक राजा पुरुरवा ने उनका चीत्कार सुन लिया। पुरुरवा सिंह के समान निर्भीक था। उसने बिना किसी हिचकिचाहट के असुर पर आक्रमण कर दिया। अन्ततः उसने असुर को तलवार के घाट उतार दिया।उर्वशी विजेता पुरुरवा के प्रेम में पड़ गयी और पुरुरवा उस सुन्दर अप्सरा का रसिक प्रेमी बन गया। किन्तु उर्वशी को स्वर्गलोक लौटना पड़ा और पुरुरवा उसके लिए बेचैन रहने लगा। पुरुरवा की समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे? उसने अपने बचपन के मित्र राजविदूषक को अपनी व्यथा कह सुनायी। एक दिन वह अपने उद्यान में बैठा उससे उर्वशी के सम्बन्ध में बातें कर रहा था कि उर्वशी उसके पीछे आ खड़ी हुई। यद्यपि वह दिखलाई नहीं पड़ रही थी। उसने पुरुरवा को अपने उपस्थित होने का ज्ञान कराया और दोनों परस्पर आलिंगन में बँध गये। ठीक उसी समय स्वर्गलोक से एक दूत आया और उसने उर्वशी को देवराज इन्द्र का सन्देश सुनाया। इन्द्र ने उसे आज्ञा दी थी कि वह तत्काल स्वर्गलोक पहुँचकर एक विशेष नृत्यनाटिका में भाग ले। लाचार होकर उर्वशी को लौट जाना पड़ा। किन्तु उर्वशी का मन नृत्य में नहीं लग रहा था। अनजाने में ही वह पुरुरवा को पुकार बैठी। नृत्यनाटिका के रचयिता भरत मुनि ने क्रुद्ध होकर तुरन्त उसे शाप दे दिया। "तुमने मेरी नाटिका में चित्त नहीं रमाया। तुम भूलोक जाकर वहाँ पुरुरवा के साथ मनुष्य की भाँति ही रहो।" उर्वशी पुरुरवा से प्रेम तो करती थी। किन्तु मृत्युलोक में नहीं रहना चाहती थी। अतएव देवराज इन्द्र के पास पहुँचकर घुटनों के बल गिड़गिड़ाने लगी कि वह उसको शाप-मुक्त कर दें। इन्द्र को अपनी प्रिय अप्सरा पर दया आयी। वह बोले, "उर्वशी, तुम भूलोक जाओ, किन्तु तुम अधिक दिन वहाँ नहीं रहोगी।" अतएव उर्वशी को पुरुरवा के पास जाना पड़ा। उसे उसके पास आने का हर्ष था, किन्तु साथ ही स्वर्गलोक के सारे आनन्द से वंचित होने का दुख भी था।पुरुरवा ने उसके लिए सारा भूलोक छान मारा। वह पर्वतों, घाटियों में भटकता रहा। विक्षिप्त होकर वह कभी-कभी वन की लताओं को उर्वशी समझ कर उनका आलिंगन कर लेता। जब वन में वृक्षों से होकर पानी की बूँदें गिरतीं, तो उसे उनमें उर्वशी के पदचाप सुनाई पड़ते। जब आकाश स्वच्छ होता और चिड़ियाँ चहचहाती होतीं, तो उसे उर्वशी के हँसने और गाने का भ्रम होता। जब आकाश मेघाच्छन्न होता, तो उसे लगता कि उर्वशी छिपी हुई है और सहसा ही उसे मिल जाएगी, किन्तु उसकी खोज व्यर्थ गयी, उर्वशी उसे प्राप्त न हो सकी। अनेक वर्षों के उपरान्त उर्वशी को उस पर दया आयी और उसके सम्मुख प्रकट हुई।उसने कहा, "तुम मुझे वर्ष में अन्तिम दिन ही पा सकोगे।" और इस प्रकार वर्ष में एक दिन ही वह पुरुरवा को प्राप्त हो पाती, वर्ष के शेष दिनों वह उसकी विरह-वेदना में जला करता, उसकी खोज किया करता, किन्तु कभी नहीं खोज पाता, उस सौन्दर्य, लावण्य, मोहकता और भव्यता के प्रतीक को और फिर यहीं से साहित्य की शुरुआत भी हुई।

निष्कर्ष

रामधारी सिंह 'दिनकर' ' (23 सितम्बर 1908- 24 अप्रैल 1974) हिन्दी के एक प्रमुख लेखक, कवि व निबन्धकार थे।वे आधुनिक युग के श्रेष्ठ वीर रस के कवि के रूप में स्थापित हैं।'दिनकर' स्वतन्त्रता पूर्व एक विद्रोही कवि के रूप में स्थापित हुए और स्वतन्त्रता के बाद 'राष्ट्रकवि' के नाम से जाने गये। वे छायावादोत्तर कवियों की पहली पीढ़ी के कवि थे। एक ओर उनकी कविताओ में ओज, विद्रोह, आक्रोश और क्रान्ति की पुकार है तो दूसरी ओर कोमल श्रृंगारिक भावनाओं की अभिव्यक्ति है। इन्हीं दो प्रवृत्तियों का चरम उत्कर्ष हमें उनकी कुरुक्षेत्र और उर्वशी नामक कृतियों में मिलता है।[5]

उन्होंने सामाजिक और आर्थिक समानता और शोषण के खिलाफ कविताओं की रचना की। एक प्रगतिवादी और मानववादी कवि के रूप में उन्होंने ऐतिहासिक पात्रों और घटनाओं को ओजस्वी और प्रखर शब्दों का तानाबाना दिया। उनकी महान रचनाओं में रश्मिरथी और परशुराम की प्रतीक्षा शामिल है। उर्वशी को छोड़कर दिनकर की अधिकतर रचनाएँ वीर रस से ओतप्रोत है। भूषण के बाद उन्हें वीर रस का सर्वश्रेष्ठ कवि माना जाता है।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 2, February 2016

ज्ञानपीठ से सम्मानित उनकी रचना उर्वशी की कहानी मानवीय प्रेम, वासना और सम्बन्धों के इर्द-गिर्द घूमती है। उर्वशी स्वर्ग परित्यक्ता एक अप्सरा की कहानी है। वहीं, कुरुक्षेत्र, महाभारत के शान्ति-पर्व का कवितारूप है। यह दूसरे विश्वयुद्ध के बाद लिखी गयी रचना है। वहीं सामधेनी की रचना कवि के सामाजिक चिन्तन के अनुरुप हुई है। संस्कृति के चार अध्याय में दिनकरजी ने कहा कि सांस्कृतिक, भाषाई और क्षेत्रीय विविधताओं के बावजूद भारत एक देश है। क्योंकि सारी विविधताओं के बाद भी, हमारी सोच एक जैसी है।

दिनकरजी को उनकी रचना कुरुक्षेत्र के लिये काशी नागरी प्रचारिणी सभा, उत्तरप्रदेश सरकार और भारत सरकार से सम्मान मिला। संस्कृति के चार अध्याय के लिये उन्हें 1959 में साहित्य अकादमी से सम्मानित किया गया। भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ राजेंद्र प्रसाद ने उन्हें 1959 में पद्म विभूषण से सम्मानित किया। भागलपुर विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलाधिपति और बिहार के राज्यपाल जाकिर हुसैन, जो बाद में भारत के राष्ट्रपति बने, ने उन्हें डॉक्ट्रेट की मानद उपाधि से सम्मानित किया। गुरू महाविद्यालय ने उन्हें विद्या वाचस्पति के लिये चुना। 1968 में राजस्थान विद्यापीठ ने उन्हें साहित्य-चूड़ामणि से सम्मानित किया। वर्ष 1972 में काव्य रचना उर्वशी के लिये उन्हें ज्ञानपीठ से सम्मानित किया गया। 1952 में वे राज्यसभा के लिए चुने गये और लगातार तीन बार राज्यसभा के सदस्य रहे। 30 सितम्बर 1987 को उनकी 13वीं पुण्यतिथि पर तत्कालीन राष्ट्रपति जैल सिंह ने उन्हें श्रद्धांजलि दी। 1999 में भारत सरकार ने उनकी स्मृति में डाक टिकट जारी किया। केंद्रीय सूचना और प्रसारण मन्त्री प्रियरंजन दास मुंशी ने उनकी जन्म शताब्दी के अवसर पर रामधारी सिंह दिनकर- व्यक्तित्व और कृतित्व पुस्तक का विमोचन किया।

उनकी जन्म शताब्दी के अवसर पर बिहार के मुख्यमन्त्री नीतीश कुमार ने उनकी भव्य प्रतिमा का अनावरण किया। कालीकट विश्वविद्यालय में भी इस अवसर को दो दिवसीय सेमिनार का आयोजन किया गया।[6]

संदर्भ

1) जीवनी एवं रचनाएँ Archived 2006-07-13 at the Wayback Machine अनुभूति पर.
2) ↑ "साहित्य अकादमी पुरस्कार". मूल से 7 अगस्त 2009को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 8 फ़रवरी 2009.
3) ↑ Sahitya Akademi Awards 1955-2007 Archived 2007-07-04 at the Wayback Machine साहित्य अकादमी पुरस्कारों का आधिकारिक जाल स्थल
4) ↑ "Top 100 famous epics of the World" [विश्व के १०० सर्वश्रेष्ठ प्रबन्ध काव्य] (अंग्रेज़ी में). मूल से 14 दिसंबर 2013 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 9 दिसम्बर 2013.
5) ↑ वो थे दिनकर, जिन्होंने संसद में नेहरू के खिलाफ पढ़ी थी कविता
6) ↑ नई दुनिया, सम्पादकीय पृष्ठ, 2005